शताब्दियों के संत

गुरु नानक

भवानी शंकर व्यास 'विनोद'

कल्पना प्रकाशन
बीकानेर

प्रकाशक

कल्पना प्रकाशन
कृष्ण-कुञ्ज
बीकानेर

मूल्य : १ रु० ५० पै० मात्र
प्रथम : संस्करण
(गुरु नानक के ५०० वें जन्म दिवस पर)

सजिल्द: २) रुपये

SHATABDION KE SANT—GURUNANAK
by : Bhawani Shanker Vyas 'Vinod'

मुद्रक : राधा कृष्णा प्रेस
कटरा नील
दिल्ली-६

२९२
जीवनी

अनुक्रम

दायरे और दिशाएँ

इतिहास की पिछले पांच सौ वर्षों की यात्रा में जो कालातीत व्यक्तित्व सामने आए हैं उनमें गुरु नानक का विशिष्ट स्थान है। उनके उपदेश भौगोलिक सीमाओं, सभ्यता की लक्ष्मण रेखाओं एवं समय की इकाइयों के बन्धन स्वीकार नहीं करते। वे शाश्वत हैं अतः सार्वभौमिक हैं। उनमें सत्य की शोध एवं ईश्वर से 'साक्षात्कार' की भावनाएं है।

सन्त गुरु नानक ने सड़े गले मूल्यों के व्यामोह से निकाल कर मानवता को नई आस्थाएं दीं—विचारों के बन्द एवं बदबूदार घेरों को तोड़कर शुद्ध ताजा एवं जिज्ञासापूर्ण चिन्तन का मार्ग प्रशस्त किया तथा धर्म के 'लेबल' में आगे आने वाले आडम्बरों को धरा-ध्वस्त कर दिया। उन्होंने शास्त्रों के नाम पर चलने वाली कमाई की दुकानों का पर्दाफाश किया, जनता की अज्ञानता के कारण होने वाले शोषण को चुनौती की तथा संस्थाबद्ध एवं व्यवस्थाबद्ध ढकोसलों का अकेले सामना किया।

उन्हें एक तरफ धर्म की ढाल ओढ़े पण्डे, पुजारियों एवं महात्माओं को चुनौती देनी थी तो दूसरी ओर शासकों की दमनकारी प्रवृत्तियों से लोहा लेना था। ईश्वर के नाम पर चलने वाले व्यापार को वे सहन नहीं कर सकते थे। अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए लोगों ने एक दो नहीं अपितु तेंतीस कोटि देवताओं की कल्पना कर रखी थी तथा सबके लिए उनकी पृथक्-पृथक् व्याख्या दी। भारत की तत्कालीन जनसंख्या के हिसाब से यदि प्रति व्यक्ति प्रति देवता का विचार किया जाता तो भी देवताओं की संख्या अधिक होती। देवताओं की इस 'भीड़भाड' में वह

सर्वशक्तिमान सर्जक एवं पालक प्रभु कहीं खो सा गया
जो विश्व नियंत्रा है—संचालक है सृष्टा है, स्वामी है।
संत महात्मा अपने-अपने हिसाब से देवताओं के नाम पर
गाव की प्रवृत्तियों को उकसा रहे थे ।

सारा समाज ऊँच-नीच की सीढ़ियों एवं भेद-भाव
दीवारों से ग्रस्थ एवं जर्जरित हो चुका था। जातिगत वरिष्ठ
कर्म की प्रधानता पर शासन करती थी। मनुष्य मनुष्य के बी
कितने ही उपकरणों की खाइयां थीं तथा ईश्वर तक पहुंचाने
एकाधिकार वादी पासपोर्ट विक्रेता अपने आप को मानव
के मसीहाओं के रूप में प्रस्तुत कर रहे थे। इस कुण्ठाग्र
जीवन में एक ऐसी वाणी निकली जिसने थोथी मान्यताओं
सीधा विद्रोह किया तथा बीच के दलालों को हटाकर मान
एवं ईश्वर के बीच में सीधा सम्बन्ध स्थापित करने का प्रया
किया ।

सामाजिक फलक पर एकता के नाम पर विग्रह, जाति
नाम पर ऊंच नीच एवं भगवान के नाम पर शोषण
स्वीकृति मिली हुई थी। इस वातावरण में कुछ महात्मा ऐ
थे जो सांसारिक माया जाल, छल प्रपंच एवं वैमनस्य के चक्क
में न पड़ कर अपनी-अपनी आत्मा की उन्नति एवं उद्धार
लिए प्रयत्न करते थे। उनके तप, चिन्तन, समाधियां, भ
आदि सभी बातें स्वयं के उद्धार के लिए थीं। उन्हें अन्य सां
रिक प्राणियों के उत्थान एवं मुक्ति से जैसे कोई प्रयोजन
नहीं था। गुरु नानक ऐसे सन्तों में थे जो अपना सामाजि
दायित्व जानते थे। उन्हें अपने 'सन्त' को व्यवस्था के 'शैता
से सामना करने के लिए तत्पर रखना था। यहाँ स्थिति आत्
समर्पण एवं पलायन की नहीं अपितु सतत् संघर्ष एवं कर्त
नन की थी।

वे पीड़ितों के हामी एवं शोषितों के साथी थे । वे उनके अनुभवों के सहयात्री एवं सहभुक्ता थे। वे समाज के अंग होने के कारण समाज के प्रति उत्तरदायी थे तथा सन्त गत विरक्ति के नाम पर समाज से अलग होने वालों में से नहीं थे। अंध-विश्वासों को धर्म का स्थान देना उनके लिए सम्भव नहीं था अत: प्रचलित मान्यताओं से संघर्ष अनिवार्य था। धर्म की झूठी व्याख्या से समाज की जड़ें खोखली हो रही थीं। ऐसे समय में लोगों को सत्य के दर्शन करवाने की आवश्यकता थी ।

गुरु नानक ने एक सर्वथा नया धर्म चलाया हो ऐसी बात नही थी। उन्होंने धार्मिक विश्वासों पर से ढकोसलों का आव-रण हटाया; विश्वासों के नए भाष्य किए तथा जर्जरित मूल्यों का जीर्णोद्धार किया। सरल भाषा में अपनी 'वाणी' एवं 'शब्दों' के माध्यम से जनता की बात जनता तक पहुँचाई। अन्य महात्मा जहाँ नया धर्म चलाने की प्रवृति से उपदेश देते वहाँ गुरु नानक देव भिन्न-भिन्न धर्मों में समन्वय ढूँढ़ते थे। हर नया धर्म अपने स्वयं के घेरे में कैद हो जाता है तथा उसके बाहर मुक्त चिन्तन की स्थिति नही रहती। गुरु नानक प्रकाश पुञ्ज थे, 'अकाल' के संदेशवाहक एवं 'सत्य' के शोधक थे ।

उन्होंने मूर्ति पूजा का विरोध इसलिए किया कि इससे भाव-पूजा के स्थान पर व्यक्ति पूजा को बढ़ावा मिल रहा था। व्यक्ति पूजा इसलिए क्योंकि 'ईश्वरीय' ज्ञान देने वाले स्वयं को भी पूजा का 'पात्र' बनाते जा रहे थे। गुरु नानक ऐसे सन्तों में से नही थे जो संसार को मिथ्या प्रपंच अथवा माया जाल मान कर विरक्त हो जाते हों। यदि संसार को भगवान ने बनाया है तो फिर उसे मिथ्या कहना 'उसकी' सत्ता को ना करना है। ससार वास्तविक है—यथार्थ है पर परिवर्तनशील, सर्जन-गत एव विलयमय है क्योंकि उसका नियमन ईश्वर द्वारा होता

उनकी विलक्षण बुद्धि ने उन्हें भिन्न-भिन्न धर्मों में अन्तर्दृष्टि दी। तथा कई भाषाओं के ज्ञान को अर्जित करने में सहायता दी। वे परोपकार और नम्रता की प्रतिमूर्ति थे। भारत की सन्त परम्परा में अनुभवों एवं भौगोलिक सीमाओं की जितनी यात्रा इस धार्मिक व्यक्ति ने की उतना सम्भवतः किसी ने भी न की हो। अपने जीवन काल में लंका, वर्मा, तिब्बत, मक्का मदीना, ईराक, ईरान, अफगानिस्तान, चीन, रूस आदि देशों की यात्राएं उन्होंने धर्म प्रचार के लक्ष्य एवं अनुभवों की परिपक्वता के लिए की। भौगोलिक सीमाओं को पार करते समय उन्होंने मानव की मूल प्रवृत्तियों में सर्वत्र ऐक्य पाया; अविभाजित मानवता का दर्शन किया तथा सामान्य जनता में बन्धुत्व की अपूर्व भावना देखी। उन्होंने ढकोसलों की ऊपरी सतहों के नीचे सच्चे धर्म को बहते देखा। उन्होंने स्थान-स्थान पर आडम्बरों का अनावरण किया; मुखौटों को उखाड़ा, मुलम्मों को उतारा एवं सच्चे स्वरूप का दर्शन करवाया।

गुरु नानक सन्त परम्परा में विद्रोही तथा विद्रोही परम्परा में संत थे। उन्होंने मानवता को जो अमूल्य देन दी है उसका उनके व्यक्तित्व, कृतित्व एवं काव्य-सर्जन द्वारा आगे के प्रकरणों में वृतान्त किया जाएगा।

जीवन : घटनाओं के घेरे में

भारत के दो प्रमुख धर्मों के साथ भाग्य की एक विचित्र विडम्बना रही है। इनमें से पहला बौद्ध धर्म है जिसका सूत्रपात तथा पोषण भारत में होते हुए भी प्रचार और प्रसार विदेशों में अधिक हुआ। दूसरा सिख धर्म है जिसने देश के धार्मिक एवं सामाजिक जीवन को नई दिशा प्रदान की पर जिसके आदि गुरु के जन्मस्थान तथा पुण्य स्थल दोनों ही इस देश में नहीं रहे— दूसरे देश की सीमा में चले गए, इससे ज्यादा विधि की और क्या विडम्बना हो सकती है ? बौद्ध धर्म अपने उद्गम स्थल में अधिक नहीं पनप सका पर कई अन्य देशों का राज्य धर्म बन गया। सिख धर्म की वाणी जिस स्थान से गूंजी थी वह स्थान ही विदेश का अंग बन गया। इस विरोधाभास के होते हुए भी दोनों धर्मों की मानवता को अपार देन रही है तथा भारत दोनों पर गर्व करने की स्थिति में है।

गुरु नानक का जन्म संवत् १५२६ विक्रमी में कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा तदनुसार सन् १४६६ में हुआ था। पूर्णिमा पूर्णता की प्रतीक है और यह बात गुरु नानक के भावी जीवन में शत-प्रतिशत सही सिद्ध हुई। तलवंडी ग्राम (ननकाना साहब) को इस महापुरुष के जन्मस्थान होने का गौरव प्राप्त है। इनके पिता वेदी वंश के पटवारी श्री कल्यानराय जी थे। वे साधु स्वभाव, कर्तव्य परायण, मधुर भाषी एवं व्यावहारिक प्रकृति के थे। माता तृप्ता देवी अपने इकलौते पुत्र को व्यवहार कुशल एवं उत्तम चरित्र का बनाने में कृतसंकल्प थीं। परिवार के दो ही आकर्षण थे—बड़ी बहिन नानकी और अनुज नानक।

बचपन में सहज स्वाभाविक मैत्री, सहृदयता व उदारता के लक्षरण आगे के जीवन की पृष्ठभूमि बना रहे थे। बालक नानक अपने बाल मित्रों को निश्छल प्यार लुटाते, अपने हिस्से की चीजें मिलजुल कर खाते तथा हरि यश एवं भजन कीर्तन से भक्ति का वातावरण बनाते। भावी जीवन के अंकुर चढ़ने शुरू हो गये थे। रंगमंच पर लाई जाने वाली चीजें परोक्ष में यवनिका के पीछे तैयार हो रही थीं।

नानक को बचपन में विविध भाषाओं की ज्ञान प्राप्ति का सुअवसर मिला था पर उनकी स्वाभाविक एवं तीक्ष्ण बुद्धि किसी भी बात को शीघ्र ही ग्रहण कर लेती थी।

शिक्षक के लिए छात्र की अपूर्व मेधा एक समस्या बन गई थी। गुरु नानक की स्वाभाविक जिज्ञासा शिक्षक के सीमित ज्ञान-दान से संतुष्ट नहीं होती तथा वे हर समय और अधिक जानने को उत्सुक रहा करते थे। उन्हें हिन्दी भाषा के ज्ञान के लिए गोपाल पंडित के पास भेजा गया पर नानक तो 'चित्तरूपी' लेखक से बुद्धि रूपी कागज पर प्रेम की कलम से सत्यासत्य के लिखे हुए विचारों का मन्थन करना चाहते थे—उनकी तृप्ति अक्षर ज्ञान से होने वाली नहीं थी। अक्षर ज्ञान की तख्ती से ये कहीं पर सामाजिक मान्यता प्राप्त कर लेने के आदी भी नहीं थे। ये साक्षरता के मूर्ति पूजन के विरुद्ध थे। शिक्षक एवं शिष्य के ध्येयों में साम्य नहीं था।—पहुँच भिन्न थी तथा दृष्टिकोण पृथक थे। शिक्षक ज्ञान दान को ही सिद्धि मान बैठे थे। जबकि शिष्य इसे भक्ति का माध्यम मात्र मानते थे। मेधावी छात्र ने अपनी पाठशाला में दिया जाने वाला ज्ञान कुछ ही दिनों में प्राप्त कर लिया।

पंडित ब्रजनाथ शर्मा ने संस्कृत पठन के समय भी गुरु

नानक की वृत्ति अत्यन्त जिज्ञासापूर्ण रही । वे संस्कृत का स्वरूप मात्र कंठस्थ श्लोकों अथवा गद्य खण्डों में नहीं देखते थे । वे प्रत्येक श्लोक का अर्थ समझ कर ही उसे अपने ज्ञान कोश में में जमा कर पाते थे । कंठस्थ श्लोक विपुल ज्ञान राशि के अंग बन सकते हैं जबकि इनका अर्थ स्पष्ट हो—ऐसी उनकी मान्यता थी । यह दृष्टिकोण ही तत्कालीन संस्कृत-शिक्षा के आधार को हिला देने वाला था क्योंकि संस्कृत पंडित अपने शिष्यों को मंत्रोच्चारण करने तथा सैकड़ों श्लोक कंठस्थ करने को प्रोत्साहित करते थे । श्लोक का अर्थ धीरे-धीरे भी सीखा जा सकता है पर ज्ञान का प्रदर्शन उच्च स्वर से श्लोक बोलने से ही सकता है । मौलिक चिन्तन के आधार पर गुरु नानक जो अर्थ करते वह पंडित ब्रजनाथ शर्मा को भी चकित किये बिना नहीं रहता। गुरु नानक ने फारसी का अध्ययन मौलाना कुतुबुद्दीन का शिष्यत्व ग्रहण करके किया पर यहाँ उस्ताद अपने शागिर्द से इसलिए प्रभावित था कि उसमें अलिफ, पे, वे के मौलिक अर्थ करने की क्षमता थी तथा ईश्वरीय ज्ञान का प्रचुर भंडार था ।

तीनों भाषाओं के अध्ययन काल में एक बात समान रही कि गुरु नानक अन्य साधारण छात्रों की तरह न तो रटने में विश्वास करते थे और न ही प्रदत्त ज्ञान से शीघ्र ही तृप्त हो जाया करते थे । वे निरन्तर सीखना चाहते थे—ज्ञान के साथ चिन्तन की धारा उनके जीवन का अभिन्न अंग बन चुकी थी।

यज्ञोपवीत समारोह में भी मात्र जनेऊ धारण करने से वे संतुष्ट होने वाले न थे—वे ऐसा धागा पहनना चाहते थे जिसमें दया, संतोष और ईश्वरीय ज्ञान हो ।

उन्होंने पंडित हरदयाल को यज्ञस्थल पर कहा कि मात्र औपचारिकता निभाने के लिए वे जनेऊ धारण करना नहीं चाहते।

पवित्र धागों में जब तक दया की कपास, संतोष का सूत एवं सत्य की गुंढी न हो। उसे भारस्वरूप धारण करने से क्या तात्पर्य है ? लोग जनेऊ धारण करके द्विजत्व की तख्ती भले ही लटकालें, जीवन को शुद्ध रखने का प्रयत्न वे नहीं करेंगे। यह मिथ्याचरण जनता को धोखा देना है तथा अपने आप को गुमराह करना है। जनेऊ के प्रमाण-पत्र से स्वतः ही किसी व्यक्ति का आचरण शुद्ध नहीं हो जाता।

"दया कपाह संतोष सूत जतु गंढ़ी सतु वहु।
ऐह जनेऊ जीय का हई न पांडे घतु ॥
ना ऐहु तुहै न मल लगै न एहु जलै न जाइ।
धन्य सु माणस नानका जो गलि चल्लै पाइ ॥

ऐसी यज्ञोपवीत निर्मलता एवं अक्षयता का प्रतीक है अतः अविनाशी ब्रह्म की ओर ले जा सकती है। व्यर्थ में ढकोसला करके जनेऊ धारण करना तो मानवता के लिए कलंक है। यह सर्वथा घृणित कार्य है एवं त्याज्य है।

गुरु नानक के क्रांतिकारी विचार आडम्बरों के विरोध में सदैव सामने आए तथा युग के मिथ्याचरण एवं दिखावों का उन्होंने खुलकर विरोध किया। वे अनैतिक तत्वों के साथ संधि करने वालों में से न थे और न ही भुलावे को जीवन में सत्य का स्थान ले लेने की इजाजत देने वालों में से थे। निजी स्वार्थों की पूर्ति के लिए धर्म का सहारा लेकर उसे दूषित करने वाले लोगों से वे सदैव सावधान रहते थे।

अब तक वे बचपन की परिधि पार कर चुके थे अतः स्वाभाविक था कि उन पर गृहस्थ का कुछ दायित्व डाला जावे। माता तृप्ता देवी उन्हें व्यवहार कुशल बनाने के लिए उत्सुक थी तथा पिता की इच्छा थी कि वे व्यावसायिक कार्यों में

दक्षता प्राप्त करे। व उनके उदार व्यवहार, दानशीलता एवं पीड़ितों के प्रति सहानुभूति से परिचित थे अतः अपनी इच्छा के मार्ग में आने वाली कठिनाइयों का उन्हें पूर्ण ज्ञान था फिर भी पुत्र के लिए यह खतरा उठाना उन्होंने श्रेयष्कर माना। नानक को पहले गायें चराने का कार्य दिया गया पर जंगल में अन्य बालकों को लेकर वे हरि चर्चा करने लगे तथा गायों का ध्यान रखना छोड़ दिया। स्वाभाविक था कि लोग उलाहना देते। नानक की उदासी, चिन्तन एवं वैराग्य वृत्ति से पिता का घबराना आवश्यक था अतः उन्होंने निदान के लिए वैद्य को बुलाया। व्याधि शारीरिक नहीं आत्मिक थी; वैद्य के पास ऐसी व्याधि का निदान हो ही कैसे सकता था? नानक ने अपनी दशा के सम्बन्ध में वैद्य को जो बातें बताईं तथा ईश्वरीय ज्ञान से उन्हें जिस तरह जोड़ा, वे स्वयं यह बताने के लिए पर्याप्त थी कि उनके मन में कितनी अगाध वेदना एवं अनन्त पीड़ा है। उदासी एवं सांसारिकता से अनास्था का यह क्रम नानक के जीवन में मृत्यु पर्यन्त चलता रहा। वे गृहस्थ धर्म में रहते हुए भी उन समस्त सामाजिक लिप्साओं से मुक्त थे जिनसे साधारण सांसारिक प्राणी ग्रस्त हो जाते हैं। उन्होंने अपने जीवनयापन के उदाहरण से स्पष्ट कर दिया कि एक गृहस्थी भी उच्चकोटि का भक्त एवं समाज-सुधारक हो सकता है तथा आदर्श जीवन के लिए सन्यास अथवा वैराग्य ही मात्र विकल्प नहीं बन सकते।

महानता से ईश्वरीय शक्ति का कुछ न कुछ सम्बन्ध होता ही है—बचपन में गुरु नानक ने कुछ ऐसे असम्भव कार्य किए जो चमत्कारों की श्रेणी में आते हैं। एक किसान द्वारा इनकी शिकायत की गई कि उनकी गायों ने उसके खेत को चर लिया तथा फसलों को क्षति पहुँचाई। गुरु नानक ने प्रतिवाद करते हुए कहा कि फसलें यथावत् हैं तथा खेत हरा-भरा है। देखने पर

ज्ञात हुआ कि नानक साहब की बात सही थी। महापुरुषों के जीवन में ऐसे चमत्कारों का होना असम्भव नहीं पर उन्हें बढ़ा-चढ़ाकर लिखना तथा अतिशयोक्ति करने की भक्तों की प्रवृत्ति ही संदेह उत्पन्न करती हैं। इन चमत्कारों का वर्णन ईसा, मुहम्मद, बुद्ध, शंकराचार्य, महावीर एवं दयानन्द के जीवन में भी मिलता है तथा उन्हें न तो इसलिए स्वीकार किया जा सकता कि वे उनकी ईश्वरीय शक्ति के प्रमाण हैं और न ही इसलिए संदेह किया जा सकता है कि ऐसी बातें असम्भव हैं। उन पर तार्किक दृष्टि से विचार करना युक्ति-युक्त है। एक बार नानक साहब की सुप्तावस्था में एक साँप द्वारा फन फैलाकर उन पर छाया करने की घटना को भी चमत्कारिक बताया जाता है। ये सब घटनाएं महत्वपूर्ण हैं पर इनसे अधिक महत्वपूर्ण वे सारी अन्य बातें हैं जिनसे उनके जीवन का ताना-बाना बुना गया था।

नानक के जीवन की अनेक विशेषताओं में एक यह थी कि वे धर्म को अंध श्रद्धा से नहीं जोड़ते थे तथा शास्त्रार्थ अथवा स्वतन्त्र चिन्तन द्वारा सत्यासत्य का निरुपण किया करते थे। उनके लिए शास्त्रार्थ की विधि मात्र हिन्दुओं के लिए सीमित हो, ऐसी बात नहीं थी। वे मुसलमान फकीरों, ब्राह्मणों, कनफड़िए साधुओं आदि किसी से भी शास्त्रार्थ करने को तैयार रहते थे। शेख फरीद की समाधि पर लगने वाले मेले के अवसर पर शेख इब्राहीम के साथ उनका शास्त्रीय चिन्तन एवं वाद-विवाद यह सिद्ध करता है कि गुरु नानक बचपन से ही तेजस्वी विद्वान थे। आयु की वृद्धि के साथ-साथ उनकी विद्वता भी बढ़ती गई एवं एक ऐसा अवसर आया जब उन्होंने धर्म के नाम पर चलने वाले आडम्बरों का पर्दाफाश करके रख दिया।

यह बात सही नहीं कि गुरु नानक जान-बूझकर ऐसी क्रियाएं करते जो उनके गृहस्थ सम्बन्धी दायित्वों के विरुद्ध थी। उत्तर-

दायित्व का प्रशिक्षण देने के लिए जब पिता कल्याणराय जी ने उन्हें व्यापार में लगाना चाहा तो उन्होंने मना नहीं किया। गुरु नानक को स्पष्ट आदेश दिया गया कि बाहर से सामान लाकर मुनाफे से बेचना है ताकि व्यापार में वृद्धि हो सके। भाई बालाजी के साथ गुरु नानक इस प्रयोजन के लिए रवाना भी हुए। इस समय तक तो उन पर अपने उत्तरदायित्व की भावना सवार थी पर बाद की घटना से उनमें फिर परिवर्तन आ गया। जंगल मे साधुओं के समूह के मिल जाने पर धर्म चर्चा हुई तथा यह भी मालूम हुआ कि साधु तीन दिनों से भूखे हैं। यहीं पर व्यावसायिक उत्तरदायित्व चकनाचूर हो गया तो मानवता का दायित्व जागृत हो उठा। उन्होने सम्पूर्ण धनराशि साधुओं की क्षुधा शान्ति मे लगा दी। पिता के भय से वे पुनः घर नही लौटे तथा एक पेड़ के नीचे विश्राम किया पर यह बात कल्याणराय जी से छिपी नही रह सकी। ज्ञात होने पर उनका स्वाभाविक क्रोध और प्रताड़ना के भाव सामने आए पर नानक तो सच्चा सौदा करके आए थे। साधारण यातनाओं से सौदे की महत्ता को टाला थोड़े ही जा सकता था। सांसारिक एवं व्यावहारिक पिता के लिए धार्मिक प्रवृति का पुत्र एक समस्या बन गया था।

इस बीच बहिन नानकी का विवाह सुल्तानपुर निवासी एवं परम ईश्वर भक्त जयराम जी के साथ सम्पन्न हो चुका था। नानकी अपने पिता के कठोर व्यवहार एवं भाई के अद्भुत स्वभाव से परिचित थी। जयरामजी ने उसके आग्रह पर नानक देव को सुल्तानपुर ले आने का निर्णय किया ताकि परिवर्तित परिवेश में स्वभावगत अन्तर आ सके। बहिन अपने भाई से स्वाभाविक प्रेम करती थी अतः उसने वे सारी सुख सुविधाएं दीं जो प्रभु-भक्ति एवं हरि चर्चा के कार्य में सहायक हों तथा नानक देव

पर मानसिक तनाव नहीं आवे। गुरु नानक ने यद्यपि मुक्ति के वातावरण को पसंद किया पर अपने जीजा एवं वहिन पर निर्भर रह कर आराम से जीवन व्यतीत करने की वात उन्हें रुचिकर प्रतीत नहीं हुई। फलतः उन्होंने जयरामजी से किसी व्यावसायिक कार्य में लगाने की वात स्वेच्छा से कही। नानक देव को हम इसी वात के आधार पर नवाब दौलत खान के मोदीखाने के संचालक के रूप में देखते हैं। अव व्यावसायिक एवं धार्मिक विचार-धाराएं समानान्तर रूप से चलने लगीं थी पर धार्मिक विचार अभी भी अन्य समस्त विचारों पर हावी थे। भूखों, दलितों एवं पीड़ितों के लिए मोदीखाने की सामग्री उपस्थित थी क्योंकि मानवता का त्राण ही तो सच्चा सौदा है। इसी वीच गुरु नानक 'तेरा ही तेरा' के उच्चारण से भगवान के साथ अपना तादात्म्य सम्वन्ध स्थापित करने के प्रयास में लगे हुए थे। वारह वार तोलने के वाद तेरहवीं वार से फिर एक ही नारा गुंजित होता और 'तेरा ही तेरा' में भक्त और भगवान का आत्मिक सम्पर्क हो जाता। इससे आगे तोलने की आवश्यकता ही नहीं थी। आगे की सारी सँख्याएं 'तेरा ही तेरा' में समा गई थीं।

भगवान वुद्ध की तरह गुरु नानकदेव ने भी संसार में अपना वास्तविक रूप दिखाने से पूर्व गृहस्थ धर्म का पालन किया। १६ वर्ष की आयु में आपका विवाह चक्खो निवासी मूलचंद खत्री की सुलक्षणा कन्या (सुलक्खन जी) के साथ सम्पन्न हुआ तथा प्रेम-पूर्वक जीवन यापन करते हुए आगे के आठ वर्ष गृहस्थ धर्म की भूमिका निभाने में वीते। इन आठ वर्षों में ही गुरु नानक देव के दोनों पुत्रों—श्रीचंद एवं लक्ष्मीचंद—का जन्म हुआ। मोदीखाने में सेवा करते, हरि चिन्तन एवं गृहस्थ निर्वाह की भावना से वे शांतिपूर्वक उस राह की ओर जा रहे थे जिधर मानवता के कल्याण के लिए एक महान धर्म को जन्म लेना था। गृहस्थ

में रह कर भी वे प्रपंचों एवं माया जालों से परे थे—सांसारिक विषय-वासनाओं से निलिप्त एवं पारस्परिक वैमनस्य से सर्वथा दूर थे। उनके जीवन के सारे अनुभव आगे जाकर मानवता के हितों में संयोजित होने थे अतः मधुर, कटु, तिक्त, सभी अनुभवों को उन्होंने अत्यन्त लगन से संजोया ताकि परोपकार के क्षेत्र में उनका प्रयोग किया जा सके।

स्वाभाविक था कि गृहस्थ के नाते हुए कर्म एवं उत्तरदायित्व को देखते हुए माता सुलक्खनी जी गुरु नानक के व्यवहार से चिन्तित होतीं। वे सांसारिक पक्ष में विश्वास करती थीं अतः उनका निरन्तर प्रयास यही रहता था कि नानक देव अधिक से अधिक अर्थोपार्जन करें ताकि वे लोग स्वावलम्बी बन सकें। सारा गृहस्थी ही जैसे नानक के विरुद्ध षड्यन्त्र में लग गया था—इस पूरे परिवेश में केवल नानकी ही ऐसी थी जिसे अपने भाई के गुणों एवं कर्मों का पूर्वाभास था तथा उनकी महानता के प्रति वह आश्वस्त थीं। परिस्थितियाँ गुरु नानक के मार्ग में बाधाएँ उत्पन्न कर रही थीं अतः उन्होंने भगवान बुद्ध की तरह गृहस्थ त्याग का निर्णय लिया एवं बिना पूर्व सूचना के तीन दिनों तक 'अंतर्ध्यान' हो गए। वेई नदी में स्नान करते समय वे 'अलोप' हुए थे। भक्त लोगों ने इस स्थिति को भी किसी न किसी चमत्कार से जोड़ लिया तथा सम्भावना व्यक्त की कि सम्भवतः नानकदेव वरुण देवता के माध्यम से ईश्वर से साक्षात्कार करने पहुँचे तथा उसके संदेश को लाकर मनुष्यों का कल्याण किया।

नवाब की सेवा में नियुक्त कोई व्यक्ति तीन दिन तक मोदी-खाने से लुप्त रहे तो जाँच पड़ताल होती ही है। उनके पुनः प्रकट होने पर नवाब दौलत खाँ ने उन्हें बुलाया पर वे तो स्वेच्छा से उसकी सेवा से मुक्त हो चुके थे। दुबारा बुलाए जाने पर नानक ने बताया कि उन्होंने भगवान की सेवा कर ली है तथा उनकी

दृष्टि में हिन्दू एवं मुसलमान दोनों बराबर हैं तथा दोनों ही भटके हुए हैं। महान व्यक्तियों को अपने जीवन काल में कई परीक्षाओं से गुजरना पड़ता है। बिना चमत्कार अथवा अग्नि परीक्षाओं से प्राप्त सिद्धि के कोई भी उन्हें 'सिद्ध' स्वीकार नहीं करता। नवाब ने किसी के कहने पर नानक से आग्रह किया कि यदि उनकी दृष्टि में हिन्दू मुसलमान बराबर हैं तो फिर वे सबके साथ नमाज पढ़कर अपने कथन की पुष्टि करें। धर्मान्धता के उस युग में इस घटना से हलचल मच गई तथा सभी यह देखने को उत्सुक थे कि क्या नानक देव नमाज़ पढ़कर धर्म परिवर्तन करने वाले हैं अथवा अपने कथन से हटने वाले हैं। नमाज हुई पर नानक ने भाग नहीं लिया। वे संभवतः लोगों की मनः स्थितियों का अध्ययन कर रहे थे। नमाज़ में लगे व्यक्तियों का ध्यान कहीं और ही था। नवाब स्वयं तो कन्धार में घोड़े खरीदने का विचार कर रहे थे और काजी अपनी घोड़ी के बछड़े के ध्यान में था। इस 'चमत्कार' का सब पर प्रभाव पड़ा तथा नानक देव के लिए आगे का मार्ग प्रशस्त हो गया।

सन्यास धारण करके वे प्रभु भक्ति में लीन हो गए तथा समाधि एवं आत्मचिन्तन से जगत के उद्धार के उपाय सोचने लगे। अपने साथी एवं शिष्य मरदाने को वे रबाब बजाने को कहते तथा उस रागिनी के साथ अपनी स्वर साधना करते। यह क्रम कुछ समय तक चला। गुरु देव की प्रथम भारत यात्रा को भक्तों ने पहली उदासी की संज्ञा दी है। इस यात्रा में उनका मुख्य प्रयोजन विभिन्न संप्रदायों के संतों से मिलना; सत्संग करना, शास्त्रार्थ एवं विवादों से आडम्बर खण्डित करना तथा धर्म का प्रचार प्रसार करना था।

प्रथम उदासी की यात्राओं का यदि वर्गीकरण करें तो उनमें धर्म प्रचार, आडम्बर खण्डन, सामाजिक बुराइयों का उन्मूलन,

संतो की वाणी का संकलन तथा सत्य के मार्ग का निरूपण आदि मुख्य बातें सामने आती हैं। एमनाबाद में गुरु नानक ने जाति प्रथा पर एक करारी चोट की तथा शूद्र भाई लालू (लालो) के घर का रूखा सूखा भोजन स्वीकार करके दीवान एवं स्वजातीय खत्री मलिक भागो के ब्रह्मभोज का निमंत्रण ठुकरा दिया। प्रारम्भ में संभवतः देव पुरुषों को चमत्कार से ही अपनी बातें सिद्ध करनी पड़ती हैं। मलिक भागो के पूछने पर गुरु नानक ने बताया कि उसके भोजन में अत्याचार की दुर्गन्ध आती है जबकि भाई लालो की रोटियों में प्रेम की सुवास है। गुरु जी ने दोनों घरों से मंगाए भोजन को अलग-अलग हाथों में दबाकर कहा कि भाई लालो की रोटी में परीश्रम का प्रतीक दूध एवं मलिक के भोजन में अत्याचार एवं शोषण का प्रतीक खून बहता हुआ नजर आ रहा है।

स्यालकोट में उन्होंने 'हमज़ा गोस' नामक फकीर को शहर के विनाश के लिए अनुष्ठान करने से रोका। वह फकीर एक व्यक्ति के विश्वासघात के कारण पूरे शहर के विनाश की प्रार्थना कर रहा था।

यात्रा के मध्य आप रायबुलार (तलवंडी के जागीरदार) के निमंत्रण पर अपने जन्म स्थान भी गए। माता पिता एवं सम्बन्धियों ने उनको ध्येय से विचलित करने के प्रयास किए, घर पर रह कर प्रभु भजन करने की पेशकश की, तरह तरह के प्रलोभन दिए पर दृढ प्रतिज्ञ नानक देव इन पर ध्यान न देकर अपनी यात्रा पर रवाना हो गए।

कुरुक्षेत्र में उन्होंने एक अन्य उपाय से अंधविश्वास को ध्वस्त करने का प्रयास किया। सूर्य-ग्रहण के अवसर पर लोग दान पुण्य दक्षिणा एवं स्नान ध्यान से ईश्वर की प्राप्ति क

देवशक्ति एवं महान साधना के आगे जादूगरों के मंत्र आदि निष्क्रिय, एवं अशक्त प्रमाणित हुये। गुरु नानक ने निरंकार अकाल पुरुष की साधना का मूलमंत्र देकर जादूगरों का मोह भंग कर दिया। उस मंत्र में जनहित की भावना परिलक्षित होती है तथा ईश्वर के प्रति सम्पूर्ण आत्म समर्पण है। "ओं सति नामु करता पुरख निरभउ अकाल मूरति अजुनी सैभं गुर प्रसादि" उनके महान तेज एवं निर्भीक व्यवहार ने कई लोगों को उनका अनुयायी बना दिया तथा गुरु आश्वस्त होकर यात्रा पर आगे निकल पड़े।

गुरु नानक बीच-बीच में जनता का दुःख निवारण भी करते जाते थे। बरछा साहब नामक स्थान पर खारे जल से आक्रांत जनता के लिए एक जगह अपना बरछा गाड़कर मधुर शीतल जल की धारा प्रवाहित की तथा धर्मोपदेश भी दिया। ये सारे 'चमत्कार' देव पुरुषों के जीवन में होते रहते हैं। यदि इनको सही न भी माना जाये तो भी मूल भावना का तो आदर किया ही जा सकता है। ऊपर की घटना तो मात्र चमत्कार के घेरे में नहीं आती। उसे गुरु नानक के दिव्य-ज्ञान एवं अनुभवों के आधार पर भी प्रमाणित किया जा सकता है।

साधनों के अभाव एवं मात्राजन्य कठिनाइयों के बावजूद भी आज से लगभग ५०० वर्षों पूर्व बीहड़ जंगलों, पर्वत मालाओं एवं घाटियों में से होते हुए यह महान धार्मिक ऐतिहासिक यात्री आसाम आदि प्रदेश पार करता हुआ नाग प्रदेश में पहुँचा तथा देवी के उपासकों को एकेश्वरवाद की शिक्षा दी।

प्रथम उदासी की यात्राओं में जगन्नाथपुरी के प्रवास का अत्यधिक महत्व है। गुरु नानक ने दीप, घंटिका, नगाड़े, मंत्रोच्चारण आदि के द्वारा सम्पन्न होने वाली आरती में जब

भाग नहीं लिया तो जिज्ञासु लोगों ने इसका कारण जानना चाहा। नानक देव ने सहज स्वाभाविक रूप से बताया कि जब प्रकृति स्वयं अपने उपकरणों से प्रभु की आरती में आ रही है तो फिर कृत्रिम साधनों के अपनाने या दिखावा करने की क्या आवश्यकता है ?

गगन में थाल रवि चंद्र दीपक बने,
तारका मंडला जनक मोती ।
धूप मलिआनलो पवन चंवरी करे,
सगल बनराय फूलंत जोती ।
कैसी आरती होय भवखंडना तेरी,
आरती अनहदा शब्द वाजंत भेरी ।
सहस तव नैन नन नैन हहि तोहे को,
सहस मूरत नैन एक तो ही ।

इस आरती में आकाश रूपी थाल, सूर्य चंद्र रूपी दीपक, तारागण रूपी मोती मलयागिरि चन्दन एवं पवन रूपी चवर की कल्पना की गई थी। इस आरती के प्रभु एक भी नेत्र न रखते हुए भी सहस्र नेत्र हैं तथा रूपहीन स्थिति में भी महाकाय हैं। पंडे पुजारी भी इस आरती गीत से इतने प्रभावित हुये कि गुरुदेव को अपना प्रवास काल बढ़ाने के लिए सहमत होना पड़ा।

मरदाना यद्यपि गुरुभक्त था पर उसमें सन्यासी सुलभ धैर्य एवं सहनशीलता की कमी थी। कई स्थानों पर जब वह अपने अधैर्य का प्रदर्शन करता तो गुरु जी अपनी वाणी से उस में साहस का संचार करते थे। प्रथम यात्रा काल में राजस्थान, मध्य भारत एवं अन्य स्थानों की भी यात्राएं सम्पन्न हुई तथा पूरे दस वर्षों में गुरु जी ने उत्तर पूर्व भारत का पूरा भू-भाग अपने वचनामृत से सिंचित कर दिया।

प्रथम उदासी की यात्राओं का समापन सुल्तानपुर एवं बाद में तलवंडी में निवास करने से हुआ तथा लोगों की अनेक प्रार्थनाओं के बावजूद नानक देव ने धर्म प्रचार के लिए पुनः भ्रमण करने का निर्णय किया। माता के वात्सल्य एवं पिता के आग्रह उनके निर्णय में परिवर्तन नहीं ला सके। दूसरी उदासी की यात्रा राजस्थान से प्रारम्भ हुई। गुरु नानक को राजस्थान में जैन मुनियों से धर्म चर्चा करने, उनके भ्रम निवारण करने एवं सही मार्ग बताने का अवसर मिला। बीकानेर में उन्होंने जैन साधुओं को बताया कि जो रास्ता परम पिता परमेश्वर से मिलाता है वही श्रेष्ठ है तथा भगवान का ध्यान नहीं करना हमारी कृतघ्नता है। अजमेर में उन्होंने मुसलमानों को, जो उनको नमाज़ पढ़ने का निवेदन कर रहे थे, कहा कि सही माने में "शुभ कर्म काबा है, सत्य भाषण कलमा है एवं कर्त्तव्य की पूर्ति ही नमाज़ है। मैं ऐसी नमाज सदैव पढ़ता हूं।" आबू पर्वत पर फिर जैन मुनियों से साक्षात्कार एवं शास्त्रार्थ हुआ। गुरु नानक ने सहज आनंद प्राप्ति की चेष्टा को दोषपूर्ण बताया तथा सत्य को स्थापित करने का परामर्श दिया। ये धार्मिक साक्षात्कार एक तरफ तो प्रचलित धर्मों की सीमाओं को बताते थे तथा दूसरी ओर सत्य का मार्ग व्यापक बनाते थे।

इस यात्रा काल में उज्जैन तथा ओंकार के प्रसंग सम्मिलित हैं। आवडा में गुरु नानक एवं नामदेव का पुनर्मिलन हुआ। गुरु ग्रंथ साहब में नामदेव की साखियां भी हैं। सत्य के मार्ग में सहयात्री के रूप में गुरु नानक नामदेव का सम्मान करते थे—यह बात उपरोक्त कथन से सिद्ध हो जाती है।

बिदर प्रदेश में धार्मिक ग्रंथ [illegible] को [illegible] करने का एक सुअवसर और मिला—यहाँ के [illegible] जोगी [illegible]

एवं पोरलीना द्वारा लोगों की धार्मिक भावनाओं का शोषण करते थे—गुरु नानक ने अपने अकाट्य तर्कों एवं शास्त्रीय उदाहरणों से उनके पाखण्ड का वास्तविक स्वरूप जनता के सामने रखा तथा लोगों को निर्भीक आश्वस्त एवं धर्मानुरागी बनाया। पागल प्रांत के प्रयाग काल में कनफड़िये जोगियों ने नानकदेव के अपरिग्रह सिद्धान्त की परीक्षा लेने का प्रयत्न किया तथा उन की सेवा में एक तिल रखा ताकि यह देखा जा सके कि गुरु देव उसका वितरण समान रूप से कैसे करते हैं ? नानकदेव ने मरदाने को आदेश दिया कि तिल को पीस कर जल में मिला ले ताकि सभी को तिलामृत का पान करवाया जा सके। इस उदाहरण से अपरिग्रह के महान सिद्धान्त एवं समान वितरण को आधार मिला का सही परीक्षण संभव हो सका।

दक्षिण भारत अभी आपके आगमन की प्रतीक्षा ही कर रहा था। भक्तों के विशेष निमन्त्रण पर गुरु नानक केरल प्रदेश, पालम कोट, पांडेचेरी आदि होते हुए लंका पहुँचे और एक बार फिर भारत के एक धर्म प्रचारक के पाँव किसी दूसरे देश की धरती पर पड़े। इससे पूर्व बौद्ध धर्म का सन्देश लेकर सम्राट अशोक के पुत्र और पुत्री श्रीलका गए थे तथा उन्होंने वहाँ के जन-जीवन पर ऐसी छाप छोड़ी थी कि आज तक श्रीलंका का राजधर्म बौद्ध धर्म ही है। यह उनकी प्रथम विदेश यात्रा थी। श्रीलंका के राजा रानी ने भी गुरु जी का सम्मान किया तथा सद्गृहस्थ होने एवं प्रजा पालन करने के गुणों की महिमा सीखी। गुरु नानक ने श्रीलका से मदुर, कालीकट एवं बंगलौर जैसे दक्षिण भारत के अन्य नगरों की यात्रा की ताकि ज्ञान की सरिता को सभी दिशाओं में प्रवाहित किया जा सके। नानक देव ने उत्तर की ओर यात्रा करते हुए तत्कालीन महान सन्त

ए व भगवद्भक्त नरसी मेहता से जूनागढ़ में मुलाकात की। यह दो महान आत्माओं का मिलन था, दो भिन्न विचारधाराओं के सन्तों का समागम था, दो प्रणालियों का संगम था। नरसी मेहता और नानक के मिलन ने दोनों को एक दूसरे से प्रभावित किया तथा दोनों के व्यक्तित्वों की छाप एक-दूसरे के जीवन पर पड़ी। आगे की यात्रा में गिरनार, द्वारका, कच्छ, भुज; अमरकोट, खानपुर, बहावलपुर एवं मुलतान सम्मिलित थे। मुलतान के फकीरों ने उनकी सेवा में दूध का भरा हुआ एक कटोरा भेजा जिसका प्रयोजन था कि वहाँ पर शेख फकीर आदि पहले से ही लबालब भरे हुए हैं, नए सन्त के लिए कोई स्थान नहीं है। गुरु नानक ने इस भाव-संकेत का उत्तर भी उसी रूप में दिया तथा दूध में दो बतासे डालकर एक पुष्प के साथ फकीरों के पास वापिस भेज दिया। इस सांकेतिका का प्रयोजन स्वयं स्पष्ट था। नानक का आगमन वहाँ धर्माचार्यों के सहयोग की भावना से हुआ था। उनमें दूध एवं बतासे के एकाकार होने की प्रवृत्ति थी। पुष्प का प्रयोजन सुवास अर्थात् अच्छी भावनाओं के प्रचार प्रसार से था। भाव-संकेतों के इस मौन युद्ध में भी विजयश्री नानक के हाथ लगी तथा कई शेख, फकीर उनके पास धर्म चर्चा के लिए आए।

गुरु के जीवन का उद्देश्य भटके हुए प्राणियों को सुमार्ग पर लाना था। ऐसा ही एक प्रसंग उस समय उठा जब वे अपने शिष्य सहित तलम्बा गाँव पहुँचे। सजना नामक ठग के आतंक से इस इलाके में सभी यात्री त्रस्त रहते तथा उसकी ठगी के शिकार होने का भय बराबर बना रहता। सजना यात्रियों के रात्रि विश्राम के समय उनका धन लूटने के उद्देश्य से उन्हें कुएँ में धकेल देता था। यही प्रयोग उसने नानकदेव एवं मरदाने पर करने का प्रयत्न किया पर दिव्यदृष्टि वाले नानक ने अपने शिष्य

को रबाव पर सस्वर एक गीत प्रस्तुत करने को कहा। इस गीत ने सजना के ज्ञान चक्षुओं को खोलकर उसे धर्मावलम्बी बना दिया। दूसरी उदासी की यात्राओं का महत्व तीन बातों से है। गुरु देव ने इसी यात्रा काल में प्रथम बार भारत से बाहर जाकर धर्म प्रचार किया। उन्होंने जैन, मुसलमान एवं साकार प्रभु की उपासना करने वाले सन्तों से भी इसी यात्रा काल में धर्म चर्चाएं कीं तथा सबको एकेश्वरवाद एव सत्य की शोध से प्रभावित किया। धर्मों में व्याप्त आडम्बरों का उन्होंने सफलतापूर्वक खण्डन किया तथा विभिन्न धर्मावलम्बियों को ईश्वर प्राप्ति का समान मार्ग बताया। इन तीनों बातों के लिए ही यह काल उनके जीवन में अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा था तथा इसी ने आगे आने वाली घटनाओं को दिशा दान एवं दृढ़ आधार दिया। दूसरी उदासी के उपरान्त गुरु नानक देव पुनः सुल्तानपुर एवं तलवडी पधारे तथा कलानौर ग्राम के स्थान पर ईश्वर के नाम पर करतारपुर की स्थापना की जो उनकी पुण्यभूमि होने के कारण ऐतिहासिक महत्व का स्थान बन चुका है।

गुरु नानक का अधिकांश जीवन भारत भ्रमण एवं विदेश-यात्राओं में ही बीता था। वे एक स्थान पर स्थिर रहकर मानवता के एक अंश तक ही ज्ञान को सीमित रखना नहीं चाहते थे प्रत्युत उसे समग्र मानवता की थाती बनाना चाहते थे। इसी उद्देश्य से विश्व के कोने-कोने में पहुँचकर उन्होंने लोगों के हृदयों में व्याप्त अन्धकार का निवारण किया तथा ज्ञान का शाश्वत प्रकाश चतुर्दिक फैलाया। गुरु नानक की मानवता के हित में यह महान सेवा थी। वे कबीर, दादू, रैदास, नरसी एवं नामदेव के समकालीन थे। इन महान सन्तों की एक कड़ी सारे भारत मे जो आन्दोलन छेड़ रखा था, गुरु नानक उसमें

अग्रगण्य एवं मार्ग प्रशस्त करने वाले नेता थे ।

तीसरी उदासी की यात्राएं भारत के गिरि श्रृंगों, उपत्यकाओं एवं पर्वतमालाओं की थीं। इससे पूर्व तीन वर्षों तक वे अपने गृहस्थ एवं सन्यासी जीवन का सम्मलित अनुभव करते रहे थे तथा उन्होंने खेती द्वारा उदरपूर्ति करने का दृढ़ निश्चय लिया था। मनीपुर के पास ख्वालपुर में उन्होंने पानी पर तैरते हुए पत्थरों के कारण होने वाली ठगी का भंडाफोड़ किया तथा लोगों को बताया कि झावां नामक पत्थर पानी पर तैर सकता है तथा इससे ठगी करने वाले धूर्त लोग समाज के शत्रु हैं। माहीसर में जलाभाव से त्रस्त लोगों के कल्याण के लिए पर्वत शिला को हटा कर जल धारा प्रवाहित की। इसे चमत्कार की संज्ञा भी दी जा सकती है तथा संचित अनुभवों के यथार्थ एवं सफल प्रयोग का परिणाम भी कहा जा सकता है। गुरु नानक देव के जीवन में अन्य महापुरुषों के जीवन में होने वाले दैवीय चमत्कारों की संख्या के अनुपात में कुछ कम चमत्कार ही हुये थे क्योंकि वे जीवन में अनुभवों एवं उदाहरणों के आधार पर यथार्थ चित्र प्रस्तुत करने में ही विश्वास करते थे। वे ऐसी स्थितियाँ उत्पन्न करना चाहते थे जो परीक्षासाध्य जीवन में किसी भी अन्य शुद्ध चिन्तन वाले व्यक्ति को मिल सकती हैं। गंगोतरी-जमनोतरी पार करते हुए गुरु देव ने बद्री नारायण तीर्थ का भ्रमण किया पर यह मानने से इन्कार कर दिया कि वहाँ की मूर्ति सतयुग कालीन है तथा आदि गुरु शंकराचार्य ने इसे समुद्र में से पुनः प्राप्त करके मन्दिर में स्थापित किया था। उन्होंने यह कहकर पण्डों का भ्रम निवारण किया कि जल थल नभ में व्याप्त परमपिता परमेश्वर के वे उपासक हैं तथा मूर्ति में उनकी सत्ता को सीमित करने में विश्वास नहीं करते।

कनफटे जोगियों का प्रसंग गुरु नानक के जीवन में

माना है तथा हर बार गुरु देव अपने अकाट्य तर्कों एवं उदाहरणों से उन साधुओं का भ्रम निवारण करते प्रतीत होते है। नैनीताल में कनफटे साधुओं को आश्वस्त करने के लिए रीठे को मीठा करके उन्होंने एक और 'चमत्कार' दिखाया। इसी यात्राकाल में गुरु नानक तिब्बत पहुंचे थे तथा उन्होंने लामा लोगों से धर्म चर्चा की थी। संभवतः वे प्रथम भारतीय संत थे जिन्होंने सर्व धर्म सम भाव का संदेश तिब्बत तक पहुंचाया। तीसरी उदासी की यात्रा की समाप्ति जनकपुर, गोरखपुर होते हुए सुल्तानपुर पहुंचने के साथ हुई। इस यात्रा में गुरु देव ने प्राकृतिक लीलास्थलियों का भ्रमण किया, चमत्कारों से सत्य की पुष्टि की, मूर्ति पूजा का खण्डन किया एव अंधविश्वासों के विरोध में जनमानस तैयार किया।

चौथी और अंतिम उदासी यात्रा विशेषतः विदेशों में भ्रमण करके धर्म प्रचार करने के अभियान का एक अंग थी। वे कराची के मार्ग से बिलोचिस्तान होते हुए मक्का पहुँचे। यह यात्रा मरदाने के आग्रह से एवं गुरु जी की इच्छा से सम्पन्न हुई थी। मक्का में भी ईश्वर महिमा के गीतों से उन्होंने भक्ति के वातावरण का सर्जन एव वितण्डावाद का विसर्जन किया। किम्वदन्ती के अनुसार एक बार जब गुरु नानक काबा की ओर पैर करके सो रहे थे तो प्रातःकाल एक मौलवी ने उन्हें जगाकर इस भूल की ओर इशारा किया। गुरु नानक ने उससे यह प्रार्थना की कि उनके पांव उस दिशा में कर दिए जावें जिधर ईश्वर का वास न हो। जब उनके पाँव दूसरी दिशा में घुमा दिए गए तो लोगों के कथनानुसार काबे का पत्थर भी उसी दिशा में घूम गया। यह दृष्टान्त सम्भवतः इसलिए बताया गया है कि यह प्रमाणित हो सके कि जगत नियन्ता भगवान सर्वव्यापक है तथा वह दिशाओं के बन्धनों को स्वीकार नहीं करता।

मदीना में उन्हें संगीत द्वारा धर्म प्रचार के लिए मना किया गया। पर वे भगवत् भजनों में सांसारिक सत्ता को स्वीकार नहीं करते थे। उन्होंने अपनी गेय साधना अवाध गति से जारी रखी एवं इमाम को भी 'शब्दों' से इतना प्रभावित कर दिया कि उसे इस निषेधाज्ञा को वापिस लेना पड़ा।

उनकी कीर्ति देश-विदेश में पहले ही फैल चुकी थी। बगदाद में खलीफा ने उन्हें एक जामा प्रदान किया जिस पर कुरान की सम्पूर्ण आयतें विविध भाषाओं में लिखी हुईं थीं। उनकी इस विदेश यात्रा में मिस्र, ईरान एवं रोम भी सम्मलित है। लौटते समय वे पेशावर पहुँचे जहाँ एक फ़कीर ने मरदाना को एक जल स्रोत से पानी नहीं लेने दिया। उसने तर्क दिया वह एक काफिर का शिष्य है। गुरु नानक ने उसी स्थान पर जल का एक अन्य स्त्रोत निकाल दिया। फ़कीर ने आवेश में आकर उन पर एक शिलाखंड लुढ़काया। आगे जाकर वह स्थान पंजा साहिब के नाम से प्रसिद्ध हुआ क्योंकि गुरुदेव ने अपने पंजे से उस शिलाखंड को रोका था।

उनके एमनाबाद प्रवास के समय बाबर का भारत पर भयंकर एवं बर्बर आक्रमण हुआ था। उनके शब्दों में—

खुरासान खसमाना कीता हिन्दुस्तान डराइया।
आपै दोसु न देई करता जमु करि मुगलु चढ़ाइया।।

\+ \+ \+

करता तूं सभना का सोई।
जो सकता सकते कउ मारे ता मनि रोग न होई ।।

एमनाबाद से करतारपुर पहुँच कर शेष जीवन पुनः गद्दी पर व्यतीत किया। उनकी दिनचर्या में नियमित कार्यक्रम था।

स्नान ध्यान, ईश प्रार्थना, प्रवचन, लंगर में भोजन, भजन कीर्तन आदि उनके दैनिक कार्यक्रम के निश्चित अंग थे। जाति-पांति के भेद-भाव से रहित एवं प्रेम सहित सभी लोग लंगर में एक साथ भोजन करते एवं हरिचर्चा में भाग लेते।

संवत् १५९६ विक्रमी में ७० वर्ष की आयु में गुरु नानक देव इस प्रकार संसार को छोड़ कर करतारपुर में (जो अब पाकिस्तान में है) परलोक गामी हो गए।

संगत, पंगत और शिक्षाएँ

गुरु नानक के जीवन का यदि विषद अध्ययन किया जाय तो ज्ञात होगा कि वे मानवता का समग्र स्वरूप देखना चाहते थे। खण्ड-खण्ड; जाति, जर्जरित, सम्प्रदाय-ग्रस्त एवं घृणा-वैमनस्य से पोषित मानवता का दर्शन उन्हें रुचिकर नहीं था। वे इसे मानव की प्रतिभा के लिए अभिशाप मानते थे।

गुरु नानक की संगत में उनके शिष्य हरिभजन, भगवद् चर्चा एवं भजन कीर्तन के लिए एकत्रित होते। इन सामूहिक प्रार्थना-सभाओं में जाति-पाँति, वर्ग, लिंग आदि के भेद-भाव का सर्वथा अभाव था तथा सम्पूर्ण वातावरण प्रेम एवं श्रद्धा से आप्लावित रहता था। एक प्रकार से उनकी संगत एक वर्ग-विहीन प्रजातांत्रिक समाज का रूप थी जहाँ प्रत्येक भक्त को समान सामाजिक मान्यता प्राप्त थी। इस प्रेमपूर्ण वातावरण में सिखों (शिष्यों) के अतिरिक्त अन्य लोग भी प्रेमपूर्वक आते तथा गुरु नानक के निष्कपट व्यवहार एवं आदर्श चिन्तन से प्रभावित हुए बिना नहीं रहते। गुरु नानक हिन्दू एवं मुसलमानों के लिए 'बाबा नानक' अथवा 'नानक शाह' हो गए थे। कीर्तन के माध्यम एवं संगीत लहरियों की स्वर साधना से उनके उपदेश और अधिक मधुर, प्रभावपूर्ण एवं स्थायी बनने लगे थे तथा लोग निरन्तर संगत में आकर समय का सदुपयोग करते थे।

पंगत में भी ऐक्य की यह भावना विद्यमान थी। सारे भक्त एक ही पंक्ति में बैठकर एक समान भोजन एक ही व्यवस्था से करते थे। उनमें सामाजिक श्रेणी लिंग वर्ग आदि के आधार पर भेद-भाव नहीं हो सकता था। इस सामूहिक भोजन

शिष्यों में आत्मीयता के भाव जागृत होते तथा सभी लोग एक सूत्र में रहकर गुरु के आदेशों का पालन करते। गुरु नानक ने लंगर की प्रथा को जन्म दिया तथा खान-पान के आधार पर मानवता में भेद करने की प्रवृत्ति को प्रारम्भ में ही समाप्त कर दिया। हिन्दू-धर्म में व्याप्त अस्पृश्यता के दोष पर यह महान प्रहार था क्योंकि एक ही लंगर में भोजन करने वाले निश्चित-रूपेण भेद-भाव की भावना से परे रहते थे। गुरु के आश्रम में राजा रंक, फकीर, काजी, व्यवसायी आदि सभी बराबर थे तथा सभी एक साथ बैठकर प्रसाद पाने के अधिकारी थे।

संगत और पंगत की दो प्रणालियों ने भारतवर्ष में धर्म के नाम पर होने वाले कई अंधविश्वासों को खण्डित कर दिया। मानवता नए रूप में निखर कर सामने आई तथा अस्पृश्यता का प्रबल प्रवाह रुक गया। भेद-भाव से ग्रस्त देश के लिए सिख धर्म युग की आवश्यकता एवं महान वरदान तुल्य था अतः भक्तों ने इसे श्रद्धापूर्वक अंगीकार कर लिया।

सिख धर्म में सत्य को सर्वोत्तम स्थान दिया गया है। स्वयं नानक के शब्दों में—

"ओंकार सतिनामु करता पुरखु निर्भउ।
निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥"

इसके अतिरिक्त उन्होंने "आदि सचु, जुगादि सचु, है भी सचु नानक होसी भी सचु" कह कर त्रिकाल एवं त्रिभुवन में सत्य के स्थायित्व पर जोर दिया तथा सत्य के अतिरिक्त किसी भी बिन्दु को सर्वोपरि स्थान नहीं दिया। "साचा साहब साचा नाइ; गुरा इक देहि बुझाई" का आशय "भगवान सत्य है अथवा नहीं, हे गुरुदेव हमें इसका ज्ञान प्रदान कीजिए" से है। सत्य की इस शोध में सिख धर्म के आदि गुरु नानक ने

व्यक्तियों से सहयोग देने का निवेदन किया। वे सत्य के मार्ग में सहयात्री बनने के लिए प्रत्येक जाति के लोगों का स्वागत करते तथा उन्हें अनुभवों में भागीदार होने के निमित्त निमंत्रण देते। गुरु नानक का मानस अंधविश्वासों, धार्मिक कट्टरता, पूजा पाठ आदि से सर्वथा मुक्त था और वे सत्य के मार्ग में इन सब आडम्बरों को बाधा तुल्य मानते थे।

नानक ने सभी धर्मों की अच्छी बातों का समन्वय किया तथा अपनी ओर से किसी नए धर्म की स्थापना नहीं की। उन्होंने एक नई दिशा अवश्य दिखाई। कालान्तर में यही धारा एक नए धर्म के रूप में सामने आई। नानक के ईश्वर सम्बन्धी विचार भी अन्य धर्मों में प्रचलित धारणाओं से भिन्न थे। वे ईश्वर का दर्शन मूर्तिपूजा, पिण्डदान, दीपदान अथवा धार्मिक क्रियाओं में नहीं करते थे। उनका ईश्वर "सभी वस्तुओं एवं जीवों का सृष्टा, सर्वव्याप्त, निर्भय, निर्द्वन्द्व, अकाल पुरुष, जन्ममरणरहित, शक्ति का पुञ्ज था जिसकी प्राप्ति गुरु कृपा से ही संभव हो सकती थी। इस धारणा के समर्थक बहुत से हिन्दू गुरु नानक के अनुयायी बन गए क्योंकि वे तैंतीस कोटि देवों के चक्कर में पड़ना नहीं चाहते थे। गुरु नानक के अनुसार ईश्वर ही सृष्टि का नियन्ता, सृष्टा एवं चालक है, वह तेज पुञ्ज और सर्वशक्तिमान है, संसार यथार्थ है क्योंकि ईश्वर ने इसकी रचना की है। वह निर्भय एवं द्वेष रहित है। वह काल, सीमा एवं अन्य बातों की परिधि से ऊपर है।" एकेश्वर प्रभु की कल्पना करके नानक ने उन सारे वितण्डावादों का खंडन कर दिया जो हिन्दू धर्म के नाम पर चल रहे थे भाई जोधसिंह ने गुरु नानक के ईश्वर सम्बन्धी विचारों को इस प्रकार रखा है,"

Thousand of eyes hast thou, but no eyes are Thine Thousands of forms are Thine but thou hast no form. Thou sands of unstained feet hast Thou, but no foot is Thine."

ऐसे प्रभु की वन्दना बाहरी उपकरणों अथवा दिखावे के साधनों से नहीं हो सकती। घंटा, घड़ियाल, आरती, शंख, चन्दन, चंवर आदि सब बाहरी उपकरण हैं। जगन्नाथपुरी के मंदिर में गुरु नानक ने आरती में भाग लेने से इन्कार कर दिया क्योंकि जब प्रकृति स्वयं प्रभु की आरती करती है तो मानवीय उपकरणों की क्या आवश्यकता है।

"गगन में थाल रवि चंद्र दीपक बने, तारका मंडला जनक मोती"
धूप मलि आनलो पवन चंवरो करे,
सगल बनराम फूलंत जोती ॥
कैसी आरती होय भवखंडना तेरी।
आरती अनहदा शब्द बाजंत भेरी ॥
सहस तव नैन नन नैव हहि तोहे को।
सहस मूरत नैन एक तोही ॥

नानक देव के अनुसार ईश्वर का बोध करने का मार्ग आत्म समर्पण का है न कि समारोह एवं दिखावे का। ईश्वर की प्राप्ति का आभास हृदय एवं आत्मा में होता है। बाहरी उपकरण उस महान विश्व नियंता से साक्षात्कार कराने में सर्वथा निष्फल एवं निष्क्रिय हैं।

कई धर्म धर्मान्तर विश्व को माया जाल एवं मात्र प्रपंच मान कर भवबंधन से मुक्त होने का परामर्श देते हैं। नानक ने इस

There is but one God, Sati by name, the creator all pervading, without fear, without enmity, whose existence is unaffected by time, who does not take birth, self existent, (to be realised through the grace of Guru"-JAP JI.)

प्रकृति का समर्थन नहीं किया । वे संसार को काल्पनिक नहीं अपितु यथार्थ मानते थे । उनकी दृष्टि में इसे स्वप्न अथवा मृग मरीचिका कहना जानबूझ कर इसके अस्तित्व को नकारना है। संसार ईश्वर की सत्ता से उसी प्रकार जुड़ा हुआ है जैसे और ईश्वरीय तत्व जुड़ा करते हैं। यदि ईश्वर सत्य है तो संसार भी सत्य है। गुरु नानक के ये विचार भाई जोधसिंह ने इस प्रकार किए हैं "The world is not a dream or a mirage···" Real are all Thy worlds and created objects. Real are all Thy thoughts and works...Real is Thy nature, Or everasting King." संसार सत्य होते हुए भी परिवर्तनशील है। इसमें एक ही स्थिति अनन्त काल तक नहीं चलती। गुरु नानक ने इसी कारण से कहीं-कहीं पर संसार को 'धुँए का पहाड़' अथवा 'स्वप्न' कहा पर उसका तात्पर्य यही था कि सब चीजें परिवर्तनशील हैं, शाश्वत नहीं । इनमें निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। यह एक जीवन्त नाटक है जिसमें हर घड़ी परिवर्तन होना स्वाभाविक है। सृष्टि ईश्वर में ही जन्म लेती है, ईश्वर में ही विलयशील है ।

गुरु नानक ने मानवता का धर्मों, वर्णों अथवा जातियों के आधार पर विभाजन स्वीकार नहीं किया । व्यक्ति दो ही प्रकार के हो सकते हैं—ईश्वर द्वारा प्रेरित गुरमुख तथा मन द्वारा प्रेरित मनमुख। गुरमुख लोग प्रत्येक कार्य को ईश्वर प्रेरित समझकर उसी को समर्पित कर देते हैं। मनमुख अपने हृदय की भावनाओं एवं मस्तिष्क के विचारों के अनुसार जीवन का निर्माण करते हैं तथा प्रभु से प्रेरित नहीं होते। गुरु नानक यद्यपि जातियों में विश्वास नहीं करते थे पर उन्होंने सच्चे ब्राह्मणों, काजियों, योगियों आदि की व्याख्या अवश्य की है। सच्चा ब्राह्मण वह है जो ब्रह्म का ज्ञाता हो, संतोषी, आदर्श स्वभाव एवं जप तप में अपना

करने वाला हो। वह सब प्रकार के बंधनों से मुक्त होना चाहिए ऐसा ब्राह्मण पूजा के योग्य है।" इसी प्रकार अन्य जातियों के व्यक्तियों की भी व्याख्या की गई है। गुरु नानक मनुष्य का धर्म दो आधार पर अलगाव नहीं मानते पर धर्म को वे उसके कार्यों में देखते हैं। धर्म को दर्शन भिन्न प्रकार के वस्त्रों, धार्मिक क्रियाओं, प्रतीकों, उत्सवों आदि में नहीं हो सकते। इस आधार पर बने भिन्न-भिन्न सम्प्रदाय असत्य की ओर ले जाते हैं। सिख धर्म ईश्वर भक्ति, सत्य, सदाचार, गुरु सेवा, ईमानदारी आदि चिरन्तन सिद्धान्तों पर आधारित है तथा ये सभी सिद्धान्त गुरु नानक देव द्वारा प्रेरित हैं अतः सिखों के लिए सर्वमान्य हैं।

गुरु नानक की अहिंसा मात्र शारीरिक हिंसा का अवरोध नहीं अपितु मन, वचन, कर्म आदि तीनों प्रकार की हिंसाओं को रोकना ही उनके अनुसार अहिंसा का अनुपालन है। इस कार्य के लिए अपने हितों का बलिदान करने की क्षमता होनी चाहिये। गुरु नानक कर्म एवं पुनर्जन्म के सिद्धान्तो में भी विश्वास करते हैं। कर्म ही मनुष्य के सांसारिक जीवन को गति प्रदान करता है तथा पुनर्जन्म की पृष्टभूमि भी बनाता है। विश्व में प्राणियों की भिन्न-भिन्न प्रवृतियों के पीछे उनके पूर्वजन्म के कर्म हैं। यही कारण है कि कुछ लोग लालची एवं परिग्रही हैं तो कुछ त्यागी उदासीन एवं निलिप्त हैं पुनर्जन्म में पूर्व जन्म के कर्म निर्णायक स्थिति में रहते हैं। अपने सद्‌कर्मों से व्यक्ति चाहे तो इस जन्म में पुराने संस्कारों को शिथिल अथवा तेज कर सकता है। भक्ति के आधार पर एक व्यक्ति अपने आप को इतना ऊँचा उठा सकता है कि भगवान के साथ उसका विलय हो जाए अर्थात वह संसार चक्र में आवागमन से बच सकता है। इस कार्य में जाति वर्ग अथवा सम्प्रदाय बाधक नहीं हो सकते। नानक के सिद्धा-

न्तों में संसार से पलायन की कोई भी भावना नहीं है। वे इसे साकार, सजीव, जीवन्त विश्व मानकर इसमें सद्‌गुणों से रहने का परामर्श देते प्रतीत होते हैं। उन्होंने अपनी शिक्षाओं को सम्प्रदायों के सीमित दायरों से उन्मुक्त रखा तथा नई दिशाएं देने का प्रयास किया। हिन्दू एवं मुसलमान समान रूप से उनकी श्रद्धा करते थे और वे "गुरु नानक शाह फकीर, हिन्दू का गुरु, मुसलमान का पीर" नाम से प्रसिद्ध हो गए थे।

गुरु नानक मूर्ति पूजा एवं समस्त धार्मिक आडम्बरों के सर्वथा विरुद्ध थे। भगवान की मूर्ति बनाकर उसकी महत्ता का साक्षात्कार संभव नहीं है। "He cannot be installed like an idol, nor can man shape his likeness"[1] भगवान की प्राप्ति तीर्थयात्रा अथवा गंगास्नान आदि में भी संभव नहीं क्योंकि मन की पवित्रता उक्त उपकरणों से बहुत उत्कृष्ट वस्तु है और पवित्रता के बिना ईश्वर के सानिध्य में आना असंभव बात है।[2] प्रार्थनाओं अथवा जोर शोर से कीर्तन करने से मोक्ष अथवा निर्वाण बाकी करने वाले ईश्वरीय नियमों से परिचित नहीं है। गुरु नानक ने मानवता को नैतिकता का ठोस धरातल दिया एवं मनगढ़न्त बातों से अपने अनुयायियों को सावधान किया।

गुरु नानक ने "ओंकार" की कल्पना "कोटि ब्रह्मांड के ठाकुर" के रूप में की है जो निरन्तर प्राणि मात्र की परिफलना करता है।

"कोटि ब्रह्मांड को ठाकुर स्वामी सरब जीआ का दातारे"
प्रतिपाले नित सार सम्हाले इक गुण नहीं मूरख जाता रे"

"ओंकार" स्वयंभू (सैभं) है तथा अजोनी (अजन्मा) भी है।

---

१. जप जी थापिआ ना जाए कीता ना होई"
२. जप जी···"तीरथ नावन जे तिस भावन"

उस प्रभू की उपासना में सभी प्राणियों को परस्पर मित्रता एवं सद्भाव से रहना चाहिए ताकि मिलजुल कर अपना उद्धार कर सकें। विश्व का तत्कालीन हृदय नानक साहब की उक्त भावना के विरुद्ध था अतः उन्होंने अपने सामाजिक दायित्वों का निर्वाह करते हुए इस प्रकार की प्रवृतियों की भर्त्सना की।

"नानक दुनिया कैसी होई।
सालक मित न रहिम्रो कोई॥
भाई बंधी हेत चुकाइम्रा।
दुनिम्रा कारण दीन गवाइयां॥

विश्व के इस स्वरूप से नानक देव का असतुष्ट होना स्वाभाविक था। समाज सुधारक के नाते उनका हृदय इन बातों को देखकर तिलमिला जाता था। संसार सत्य के मार्ग में निरन्तर बाधाएं उत्पन्न करता है, असत्य का प्रचार एवं प्रसार होता है, धर्मावलम्बी हानि उठाता है, भक्त अपयश का पात्र होता है—ये सारी विडम्बनाएं उनके सिद्धान्तों से समझौता करने की स्थिति में हो ही नहीं सकती थी अतः सर्वथा त्याज्य एवं परिहार्य बातें थीं। सत्य के अनुसरण में अनवरत कठिनाइयाँ देखकर ही नानक ने कहा था—

जे को सतु करे सो छीजे, तपु घर तपु न होई।
जे को नाव लए वदनावी, कलि के लच्छन ऐई॥

गुरु नानक के सिद्धान्त इन्हीं परिस्थितियों का परिमार्जन करने के लिये थे। वे शाश्वत, सशक्त, दृढ़ एवं प्रभावशाली विचार थे जो शताब्दियों के जीवन को दिशादान की क्षमता रखते थे। उन्होंने हिन्दू मुसलमान एवं जैनियों को सन्मार्ग पर चलने का उपदेश दिया तथा समन्वयवाद के आधार पर चिन्तन के स्तर पर सभी धर्मों की अच्छाइयों का संकलन कर लिया

हिन्दुओं के लिए विशेषतः ब्राह्मणों के लिए उन्होंने "दया कपाह संतोष सूत जत गंढ़ी सत वह" की यज्ञोपवीत धारण करने का उपदेश दिया ताकि दया, संतोष एवं सत्य से जीवन की कुकृतियों का उन्मूलन किया जा सके। मुसलमानों को उन्होंने पंच कालिक नमाज अदा करने के लिए सत्य, न्याय, परमेश्वर की दया, हृदय की शुद्धि एवं परमात्मा की स्तुति नामक पाँच बातों को आधार बनाने का परामर्श दिया।

पंच नवाजा वखत पंज पंजे पंजा नाउ।
पहली हकु हलाल दुइ, तीजी खैर खुदाइ॥

चउथी नीअति रासि मन पंजवी सिफत सलाइ राजनैतिक दवाव अथवा लालचवश धर्म परिवर्तन की क्रिया के वे विरुद्ध थे तथा इसे सामाजिक अनैतिक कार्य तथा भ्रष्टाचार की संज्ञा से सम्बोधित करते थे। दवाव एवं अत्याचारों से धर्म परिवर्तन स्थायी नहीं हो पाता तथा असंतोष एवं आत्मग्लानि का शिकार बनना पड़ता है।

उनकी अन्य शिक्षाओं में हमें धैर्य एवं सहनशीलता की महत्ता एवं उपादेयता की बातें मिलती है। इस प्रसंग में नवाब द्वारा बुलाए जाने पर उसकी सेवा से निवृति की घोषणा एवं नमाज न पढ़ने के स्पष्टीकरण आदि सम्मिलित हैं। यात्राकाल में कठिनाइयों से विचलित होकर जब जब मरदाने ने गुरुदेव के सामने अधैर्य का प्रदर्शन किया; नानक साहब ने उसे धीरज रखने को कहा तथा उसके मानस में उद्वेलन के भावों को निरोहित किया। परोपकार भी उनके जीवन का अभिन्न अंग था। पिता के व्यवसाय निमित्त दिए गए धन को उन्होंने साधुओं की क्षुधा शांति के लिए खर्च कर दिया था। उनमें वाणी एवं कर्म से परोपकार की भावना का प्रचार करने की कामना की तथा

इसका उन्होंने अपने जीवन काल में [illegible] प्रयोग किया। परोपकार की भावनाओं से उद्वेलित होकर ही तो उन्होंने गृहस्थ त्याग करके संसार के कल्याण करने का दुर्गम मार्ग चुना था। इस पथ में आने वाली दुर्दम कठिनाइयों एवं निजी स्वार्थ से वशीभूत होने वाले विरोध से वे भली भांति परिचित थे। उन्होंने अपने आपको इसके लिए तैयार करके रखा था। गुरु नानक में नम्रता की भावना प्रचुर मात्रा में तथा शास्त्रार्थ करते समय भी वे संतों, फकीरों, मौलवियों अथवा कनपटे साधुओं के प्रति व्यक्तिगत सम्मान की मात्रा में कमी नहीं लाते थे। पारस्परिक सम्मान तो व्यक्तिगत सम्बन्धों का आधार होता है और इसकी अवहेलना करना मानवता की उपेक्षा करना है। विचार द्वन्द्व अथवा मतभेद की स्थिति से वैचारिक पक्ष में भले ही दूरी आवे लेकिन सामाजिक सम्बन्धों को उस के अनुसार ढालना संकीर्णता का द्योतक होता है। महापुरुष ऐसी संकीर्ण प्रवृत्तियों का शिकार नहीं होते। उनका उदार चिन्तन एवं धर्म समभाव पारस्परिक सम्मान, नम्र स्वभाव ही तो उन्हें महानता की ओर ले जाते हैं तथा अनुकरणीय बनाते हैं।

नानक ऊँच-नीच एवं वर्ग श्रेष्ठता के सिद्धान्तों के कट्टर विरोधी थे। हिन्दू धर्म में व्याप्त इसी दोष ने तो उन्हें ऐसी धार्मिक मान्यताओं से बगावत करने के लिए प्रोत्साहित किया था। यह अपने ढंग की एक अद्वितीय सामाजिक एवं धार्मिक क्रांति थी जिसने पुरानी मान्यताओं को धरा ध्वस्त करके नए जीवन का सूत्रपात किया।

आडम्बर जहां कहीं भी धर्म का स्थान ले लें वे उस पर हावी हो जाते हैं तथा आदर्श एवं सैद्धान्तिक पक्ष के स्थान पर

थोथे नारे एवं ढकोसले लोगों को गुमराह करने लगते हैं। गुरु नानक ने जगन्नाथपुरी के मंदिर में होने वाली आरती का इसी लिए बहिष्कार किया क्योंकि उसमें दिखाने की मात्रा वास्तविक भक्ति भावना से कहीं अधिक थी तथा भक्त उपकरणों से होने वाली आरती में मिथ्या आत्मसंतोष धारण कर रहे थे। उन्होंने मक्का में काबा की ओर पैर करके सोने में कोई आपत्ति नहीं समझी क्योंकि ईश्वर का निवास दिशा विशेष में नहीं होता—वह तो सर्व व्याप्त है एवं उसे दिशाओं की परिधि में बांधना इस की सत्ता को सीमित करने का प्रयास है। गुरु नानक ने कनफटे साधुओं के मन्त्र एवं जादू के आडम्बर का भी पर्दाफाश कर दिया एवं लोगों को सर्वशक्तिमान प्रभु की उपासना का मार्ग दिखाया। व्यक्ति में वह शक्ति नहीं कि नियति के क्रम को जादू मन्त्र से बदल सके। वह शक्ति तो मात्र ईश्वर में है तथा उस की सत्ता का हस्तान्तरण जादू टोनों अथवा मन्त्रों के पाखण्डी पुजारियों में नहीं हो सकता। हरिद्वार में इन्होंने पश्चिम में जलदान करके बता दिया कि पण्डों ने धार्मिक क्रियाओं के नाम पर कितनी भ्रांतियां फैला रखी हैं। यदि पश्चिम की ओर छोड़ी हुई जलधारा किसी दूर के खेत को सींच सकती हो तो पूर्व की ओर किया गया जलदान पिण्डों को मिल सकता है। पिण्डों के नाम पर फैले हुए पण्डावाद को यह महान चुनौती थी। जलदान एवं पिण्डदान आज भी चलते हैं, पण्डे आज भी सक्रिय हैं पर इस का यह तात्पर्य नहीं कि महात्मा नानक की वाणी में कोई शिथिलता है। निजी स्वार्थों से ग्रस्त व्यक्ति हमेशा ऐसी संस्थाओं को जीवित रखने का प्रयास करते हैं जिनसे उनकी आर्थिक सिद्धि होती हो। वे धर्मान्ध जनता की धार्मिक भावनाओं का धर्म के नाम पर शोषण करते रहते हैं। एक नानक अथवा एक दयानन्द उस सारी व्यवस्था को समूल रूप से नष्ट

नहीं कर सकता पर वह उनके विरुद्ध जनमानस जाग्रत कर सकता है।

नानक ने हिन्दू धर्म की महान सेवा की तथा उसे सीमित दायरे से निकाल कर व्यापक धरातल दिया। दृष्टिकोण में परिवर्तन लाने व धर्म को आडम्बरों से मुक्त करने का उन्होंने सफल प्रयास किया। उन्होंने हिन्दू धर्म का परिमार्जन करके उसे भ्रांतियों से उन्मुक्त किया तथा विचारों का भद्दापन दूर करके नए प्रकार से सोचने की शक्ति दी। सड़ियल व्यवस्थाओं को उन्होंने ठुकराया तथा सजीवनी शक्ति से आदर्श विचारों का पुनरुत्थान किया।

उन्होंने इस बात को जोर देकर सिद्ध किया कि परमात्मा की भक्ति सत्याचरण, हृदय की स्वच्छता और सतगुरु के ज्ञान से मिलती है न कि आडम्बरों एव भ्रांतियों के अनुसार जीवन को ढालने से प्राप्त हो सकती है। ब्रह्म भोज, गोदान, तीर्थ, हजयात्रा आदि तो पण्डे पुजारियों के ढकोसले हैं तथा इनमें अर्थ पक्ष धर्म पक्ष को प्रभावित करता है। ये पुजारी, पंडे, काजी, मुल्ले इसलिए सत्य मार्ग को प्रशस्त नहीं कर पाते क्योंकि ये सारी बातें स्वार्थ सिद्धि के आधार पर सोचते हैं। इनकी दृष्टि संकीर्ण तथा भावनाएं संकुचित होती हैं। कर्नल कनिंघम ने गुरु नानक के सम्बन्ध में कहा है कि "उनके सद्व्यवहार एक" ईश्वर निष्ठा और प्रवृत्ति एवं सदवक्तृता सभी प्रशंसनीय हैं। उन्होंने बहुसंख्यक लोगों को अपने उपदेशों से उत्साही कर्मठ और दृढ़ विश्वासी बनाया।"नानक देव ने सर्ववादि सम्मत धर्म को ही अपने दौत्य कार्य के एक मात्र अस्त्र स्वरूप ग्रहण किया था। इनके ग्रंथ विवेक और आत्मोत्सर्ग विषयक उपदेशों ... हैं।"

गुरु नानक राष्ट्रीय गतिविधियों के प्रति उदासीन दर्शक नहीं थे। वे अत्याचारों एवं अनाचारों के विरुद्ध अपने ढंग से प्रचार करते थे। बावर के बर्बर आक्रमण तथा उससे होने वाली मूल्यरिक्तता की स्थिति का उन्होंने अत्यन्त ही करुणरस भीना चित्रण अपनी कविताओं में किया तथा जनमानस को अनाचार के मुकाबले के लिए तैयार किया। वे स्वयं ईश्वर को इसके लिए आँशिक रूप से उत्तरदायी ठहराते हैं। भारत पर बावर का आक्रमण प्रभु की इच्छा के बिना तो हो ही नहीं सकता था।

खुरासान खसमाना कीता हिन्दुस्तान डराइया।
आपै दोसुन देई करता, जमु करि मुगलु बुलाईया॥
करता तूं सयना का सोई
जो सकता सकते कउ मारे ता मनि रोस न होई॥
सकता सिहु मारे पै वगै खसमैं सा पुरसाई।
रतन विगाडी विगोए कुती, मुईया सारन काई॥

ईश्वर की इच्छा के बिना तो बर्बरता का नंगा नर्तन सम्भव ही नहीं हो सकता था। प्रतीत होता है कि भगवान स्वयं शक्तिशाली लोगों का साथ देता है। यदि एक शक्तिशाली पुरुष किसी दूसरे शक्तिशाली से भिड़े तो विशेष चिन्ता की बात नहीं तथा मन में क्रोध भी उत्पन्न नहीं होता। पर यहाँ तो स्थिति बिल्कुल ही विपरीत है। यहां एक सिंह अपनी पूर्ण बर्बरता से बकरी पर आक्रमण कर रहा है।...

हिन्दुओं में जो दिशाहीनता नपुंसकता एवं भय की भावनाएं घुस गई थीं उनके प्रति भी गुरु नान[illegible] ...ागरूक

किया। मुसलमानों के आक्रमण के समय भारतीय ललनाओं के साथ होने वाले अमानवीय व्यवहार ने उन्हे तिलमिला दिया तथा गुरु मुख से ऐसी वाणी निसृत होने लगी।

"जिन सिरि सोइनि पटीआ माँगी पाइ सधूरु।
सो सिर काती मूंनी अनि गल विचि आवै धुडि।।
महलां अन्दर होदीआ हूणि वहणि न मिलनि अदूरी।
अदेसु बाबा अदेसु

आदि पुरख तेरा अंतन पाइया करि करि देखहि वेस।"'
उक्त विचारों से ज्ञात होता है कि गुरु नानक सामाजिक क्षेत्रों में उदासीन नहीं थे। जहाँ अन्य महात्मा भवबंधन से मुक्त होने का प्रयास पहाड़ों, कन्दराओं अथवा बीहड़ जंगलों में तपश्चर्या द्वारा करते थे वहाँ गुरु नानक ने समाज की बुराइयों से सामाजिक धरातल पर मुकाबला किया।

महापुरुषों के जीवन का स्वरूप सार्वजनिक होता है। उनका जीवन अन्य प्राणियों के लिए शुद्धि का एक महान उदाहरण प्रस्तुत करता है तथा वे दूषित मनोवृत्तियों से दूर होने का एक शाश्वत सदेश पा सकते है। साम्प्रदायिकता की सीमा से दूर रहकर सत्य की शोध करना अपने आप मे मानवता की एक महान सेवा है। गुरु नानक की वाणी जपुजी में अनेक संतों की वाणियों को भी उचित स्थान दिया गया है। वे धर्म के क्षेत्र मे सर्वाधिकार सुरक्षित रखने की भावना से काम नहीं करते थे। संत रैदास और संत नामदेव की वाणियों को गुरु ग्रंथ साहब में स्थान देकर नानक साहब ने अपने व्यापक दृष्टि-एवं चित की उदारता का परिचय दिया तथा आगे की

पीढ़ियों के लिए एक महान अनुकरणीय आदर्श स्थापित किया। धर्म को बाह्य चिन्हों के चंगुल से मुक्त करके पुनः शुद्ध किया। तथा रूढ़िवाद एवं कर्मकाण्ड पर करारा प्रहार किया।

उन्होंने ऐसे बाहरी चिन्हों की आलोचना की जिनसे धर्म में प्राथक्य की भावना जागृत होती हो तथा जिनकी आध्यात्मिक उपादेयता नहीं बराबर हो। नानक देव के अनुसार कोई धर्म विशेष सार्वभौम नहीं होता अपितु उसके शाश्वत विचार ही उसे सार्वभौमिकता प्रदान करते हैं। धर्म का कलेवर विचार शून्यता की स्थिति में मानवता को सुरक्षा प्रदान नहीं कर सकता निर्मल कर्म तथा हरिनाम हमें दिशा प्रदान कर सकते हैं पर आवश्यकता इस बात की है कि हम इन दोनों चीजों को आडम्बर के कुटिल चक्रों से दूर रखें ताकि शुद्ध एवं परिष्कृत चरित्र का निर्माण किया जा सके। यह बात किसी भी धर्मावलम्बी पर लागू हो सकती है तथा शाश्वत एवं चिरंतन है।

गुरु नानक देव की रचनाओं में मानवता का अमर संदेश है तथा भगवान ने स्वर सर्वशक्तिमान चरित्र का चित्रण है। जीवन में अवगुणों के प्रभाव एवं क्षणभंगुर शरीर का वर्णन उन्होंने इन शब्दों में किया है।

तनु जलि वक्ति माटी भया, मन माया मोहि मनूर

अवगुण फिरि लागू भये, कुरि वजावे तुरु"

विनु सबदै भरमाइये दुविधा होवे पूरु

मन रे सबदि तरहु चित लाइ जिन गुरु मुखि नामुन

शब्दों की महत्ता की उक्त कविता में व्याख्या की गई है। शब्द ही मानव मात्र की अवगुणों से रक्षा [illegible] गुणों का संचार कर सकते हैं। "शब्द" के प्रभाव [illegible] मता हो

कर संसार सागर में भूमता रहता है। मनुष्य उद्धार चाहता है तो भगवद् भक्ति के प्रताप से ही संभव है। मनुष्य की सेवा संसार के व्यामोह से व्यक्ति को मुक्त करवाने में समर्थ नहीं है। उससे सांसारिक सुख भले ही मिल जाए आत्मिक संतोष मिलना कठिन है। गुरु नानक ने आत्मसमर्पण के भाव से प्रभु की वन्दना करने को श्रेयस्कर माना तथा उसी के अनुसार अपने शिष्यों को मनसा वाचा कर्मणा सच्ची भक्ति का संदेश दिया। उनके चित्त की तृप्ति ईश्वरीय कृपा एवं आत्मिक संतोष से होती थी।

"हरि मेरा सिम्रिति हरि मेरा सासतर, हरि मेरा बंधु हरि मेरा भाई।

हरि को मैं भूख लागै हरि नामु मेरा मनु त्रिपतै हरि मेरा साकु अन्त होई सखाई ॥

×× ×× ××

कहे नानकु हरि का भाणा होआ कहणा कछुन जाई॥

अन्य भक्त कवियों की परम्परा में नानक ने भी अपने आप को पतित एवं ईश्वर को पतित पावन की संज्ञा दी है तथा उनसे आग्रह किया है कि इसके उपरांत भी भक्त की मर्यादा की रक्षा करें। ईश्वर पूर्ण एवं सर्वशक्तिमान है तथा भक्त अपूर्ण एवं दुर्गुणयुक्त है अतः कर्त्तव्य हो जाता है कि अपने वचनों की रक्षा करते हुए भक्त का उद्धार करे।

"तू पूरा हम ऊरे ओछे तू गहिरा हम हउरे।
तुझ ही मन राते अहि निसि भाते हरिरसना जपि मनरे॥
तुम साचे हम तुमहि राचे सबदि भेद पुनि साचे।
अहि निसि नामं रते से सूचे मरि जनमें से काचे॥

गुरु नानक ने जपजी साहब में सेवा की भावना की अत्युतम व्याख्या की है। सेवा एवे साधना सुपाय की होनी चाहिए। कुपात्र सेवा के योग्य नहीं है। मनुष्य को यदि अन्तरतम का प्रकाश प्राप्त हो जाय तो बाहर जाने को आवश्यकता ही नहीं रहती। ईश्वर तो घट घट वासी है तथा बाहरी उपकरणों से उसे रिझाने में कोई सिद्धि होने की संभावना नहीं है। यदि अन्तरात्मा को ही उस प्रकाश पुञ्ज के लिए उपयुक्त स्थान बना लिया जावे तो मनवांछित प्राप्ति हो सकती है। ऐसे परमात्मा के निमित्त सेवा एवं साधना व्यक्ति को सदमार्ग पर आरूढ़ कर सकती है तथा उससे भटक जाने से वह भ्रांतियों के महागर्त में गिर सकता है।

"अतरि वसै न बाहरि जाइ, अमृतु छोड़ि कहा विसु खाइ।
ऐसा ज्ञान जपहु मन मेरे, हो वहु चाकर साचे केरे

× ×　　　　× ×　　　　× ×

सेवा करे सो चाकर होइ, जलि थलि महि अल रवि रहिआ सोई ॥

इसी विचार की विपद व्याख्या नानक देव ने अपने अनेकानेक शब्दों में की है। उनके धार्मिक विचारों की मूल भावना यही है कि ईश्वर की सत्ता मनुष्य के भीतर महसूस करने की चीज है। पण्डे, पुजारियों, फकीरों और मुल्लाओं के बनाए हुए रास्ते भ्रमपूर्ण एवं घातक हैं क्योंकि उन रास्तों में इन तथा कथित संतों की स्वार्थ सिद्धि की भावनाएं निहित रहती हैं। मानवता के नाम पर ये सब आडम्बर एवं ढोंग आदि [illegible] हैं।

सामाजिक परिप्रेक्ष्य में आज नानक देव [illegible] ों की सर्वाधिक आवश्यकता प्रतीत होती है। [illegible] ों के

विघटन की समस्या है तथा चारों तरफ एक रिक्तता की भावना घर कर रही है। सामाजिक पक्ष लोभ, द्वेष क्रोध एवं अन्याय आदि दुर्गुणों से ग्रस्त है तथा राष्ट्रीय स्वास्थ्य इसी व्याधि से निरन्तर गिरता जा रहा है। मानव-मानव में भेद राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अनवरत रूप से बढ़ता जा रहा है तथा जातिगत, वर्गगत भावनाएं मानवता का उपहास कर रही हैं। अस्पृश्यता के थोथे प्रचार के उपरान्त भी समाज में भावनागत अन्तर परिलक्षित नहीं हो सका है।

इस वातावरण से गुरु नानक एवं उनके सहयात्री मानवता के महान सन्तो के शब्दों एवं वाणियों में ही जगत का कल्याण निहित है। इन वाणियों को यदि हृदयंगम कर लिया जावे तो निश्चित ही विश्व में एक नये जीवन का सूत्रपात किया जा सकता है। दृष्टिकोण को व्यापक बनाने एवं भावनाओं को शुद्ध करने में यह युगवाणी सार्थक सशक्त एवं सक्षम है। इस में धार्मिक सहिष्णुता एवं मानव कल्याण की भावनाएं हैं तथा सामाजिक दोषों के उन्मूलन का एक मात्र उपाय इन शब्दो के अक्षरशः परिपालन में निहित है।

मानवता का विभाजन यदि हिन्दू, मुसलमान सिख, ईसाई आदि वर्गों में होता रहा, यदि धार्मिक सहिष्णुता का अभाव एवं वर्गभेद का प्रसार चलता रहा, यदि आर्थिक असन्तुलन एवं वर्गगत शोषण व्याप्त रहा तो मानवता की धमनियों में अशुद्ध रक्त प्रवाहित होता रहेगा एवं अन्ततोगत्वा अधोपतन एवं विनाश के गर्त में उसे गिरना पड़ेगा। आज के कंठ तोड़ प्रतियोगिताओं आपाधापी तथा रक्त पिपासा के युग में इन "शब्दों" की उपादेयता सबसे ज्यादा प्रतीत होती है। तथा इनकी उपेक्षा में समग्र मानवता का महान पतन है।

गुरु नानक देव शताब्दियों के सन्त थे। उनका संदेश एक दशक अथवा एक शताब्दी के लिए नहीं है अपितु समय की परिधि से परे होने के कारण शाश्वत एवं चिरन्तन, सर्वकालिक एवं सार्वभौमिक है। वे उन महान सन्तों की परम्परा में आते हैं जिन्होंने मानवता को दोष मुक्त एवं जीवन्त बनाए रखा, युग वाणी को स्पन्दन एवं अर्थ दिये तथा युगचरणों को गति एवं दृढ़ता प्रदान की।

———